नेताजी
सुभाषचन्द्र बोस

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

नेताजी
सुभाषचंद्र बोस

आनंद और चिंता

सितम्बर सन् 1920 का अन्तिम सप्ताह। कटक के वकील जानकीनाथ बोस अत्यंत प्रसन्न थे। उनका लाड़ला सुभाष चंद्र आई.सी.एस. की कठिन परीक्षा में चौथा स्थान पाकर उत्तीर्ण हुआ था। गर्व के साथ वे सबसे कहते थे, 'मेरा सुभाष बहुत बुद्धिमान है। प्रथम तो इस परीक्षा में बैठने का उसका मन नहीं था। जिस जहाज से वह निकला वह दो मास देरी से लंदन पहुँचा। केवल सात मास की पढ़ाई के भरोसे उसने उत्तम यश प्राप्त किया। वह जिलाधीश बनेगा; उच्चतर पद पायेगा।'

जानकीनाथ यह सब कहते अवश्य थे, परन्तु उनका मन आशंकाओं से घिर भी जाता था। क्या सुभाष अंग्रेज अधिकारियों के सामने झुकेगा? क्या वह अपने ध्येय तथा विचारों को बदलेगा। सुभाष के पूर्वजीवन के कई प्रसंग उन्हें स्मरण हो आते। फिर वे चिंतामग्न हो जाते।

माता प्रभावती देवी ने मनौतियों को पूरी करते हुए समारोहों के साथ पूजापाठ किया। वे सोचती मेरे सुभाष को बहुत बड़ी तनख्वाह मिलेगी। मैं बड़े ठाठ से उसका विवाह करूँगी। परन्तु क्या वह नौकरी करेगा? वह तो बचपन से स्वाभिमानी और जिद्दी रहा है।

Scanned by CamScanner

माता-पिता के मन की आँखों के सामने सुभाष के पूर्वजीवन के अनेक चित्र साकार होने लगे।

अन्याय का विरोध

सुभाष का जन्म कटक नगर में 23 जनवरी 1897 को हुआ। जब वह पाँच वर्ष का हुआ तब उसे 'प्रोटेस्टेंट यूरोपियन स्कूल' में भर्ती किया गया। उस पाठशाला में अंग्रेज लड़के भी पढ़ते थे। वे भारतवासी विद्यार्थियों को गालियाँ देते तथा उन्हें मारते।

एक दिन मध्यावकाश में अंग्रेज बच्चे मैदान में खेल रहे थे। सब स्वदेशी विद्यार्थी पेड़ के नीचे बैठे थे। सुभाष ने उन्हें पूछा—'क्या तुम्हें खेलना नहीं भाता?'

उन्होंने कहा—'भाता तो बहुत है, परन्तु वे हमें मैदान में नहीं आने देते।'

यह सुनकर सुभाष ने कहा—'क्या, ईश्वर ने तुम्हें हाथ नहीं दिये हैं? क्या तुम गोबर मिट्टी के बने हो? निकालो गेंद।'

बच्चे पहले तो कुछ झिझके परन्तु जब सुभाष ने गेंद उछाली तब सब दौड़ पड़े। अंग्रेज बच्चे उन्हें रोक न सके। दो दलों में घमासान झगड़ा हुआ। भारतीयों ने अंग्रेजों को खूब पीटा। शिक्षक दौड़ पड़े। प्राचार्य आये। सीटियाँ बजीं। प्राचार्य ने कुछ समझाया, कुछ डाँटा। सब अपनी कक्षाओं में गये। चौथे दिन अंग्रेज बच्चों ने योजना बनाकर आक्रमण किया। सुभाष के नेतृत्व में भारतीयों ने उनकी खूब पिटाई की। प्राचार्य ने जानकीनाथ बोस को चिट्ठी लिखी— 'आपका पुत्र पढ़ाई में उत्तम है परन्तु वह गुट बनाकर मारपीट करता है, उसे समझाइये।'

Scanned by CamScanner

पिताजी ने सुभाष को बुलाकर पूछा। पूरी घटना सुनाने के बाद उसने कहा– 'आप भी प्राचार्य जी को चिट्ठी लिखें कि आप अंग्रेज बच्चों को समझाइये। यदि वे गालियाँ देंगे और मारेंगे तो हम करारा जवाब देंगे।'

आग, बिजली और तूफान

सन् 1907 की बात है। सुभाष के मामा उसे कलकत्ता ले गये। तीन ही दिनों में वापस आकर मामा ने बहन से कहा– 'सँभालो अपना लाड़ला।'

प्रभावती देवी ने पूछा– 'क्या हुआ?'

मामा ने कहा– 'क्या नहीं हुआ सो पूछो। हमारे कलकत्ता पहुँचने के एक दिन पूर्व वहाँ एक सनसनीखेज घटना हुई। पन्द्रह वर्ष के सुशील कुमार सेन ने हट्टेकट्टे अंग्रेज सार्जेन्ट को बहुत मारा। किंग्जफोर्ड ने उसे पन्द्रह बेत मारने की सजा सुनाई। वह सब सुनकर सुभाष ने एक ही जिद पकड़ी, 'मामा जी, मुझे न मिठाई खानी है न कपड़े खरीदने हैं, मुझे तो सुशील कुमार सेन के दर्शन करने हैं।' जहाँ सुशील कुमार को बेत मारे जाने वाले थे, वहाँ मैं इसे ले गया। चारों ओर भीड़ थी।

उसे चीरकर सुभाष आगे जा खड़ा हुआ। हर मार के साथ सुशील कुमार गरजता था, 'वंदे मातरम्!' इधर सुभाष काबू से बाहर हो रहा था। बड़ी मुश्किल से मैं उसे वहाँ से निकाल सका। लो सँभालो इसे। इसमें आग, बिजली और तूफान तीनों एकत्र हो गये हैं।'

Scanned by CamScanner

जीवन के आदर्श

कलकत्ता से आने के बाद सुभाष चंद्र एक पुस्तिका में क्रान्तिकारियों के चित्र चिपकाने लगा। नानासाहब पेशवा, तात्या टोपे, रानी लक्ष्मीबाई से लेकर वासुदेव बलवंत फड़के, चाफेकर बंधुगण, प्रफुल्ल चंद्र चाकी, खुदीराम बोस आदि के चित्र उसमें थे। ऊपर लिखा था—

'मुझे ऐसे ही जीना है', 'मुझे ऐसे ही मरना है।'

एक बार जानकीनाथ के रिश्तेदार पुलिस अधिकारी, उनके घर आये। उनके हाथ वह चित्रसंग्रह पड़ा। उन्होंने उसे जानकीनाथ को दिखाते हुए कहा— 'तुम स्वयं शासकीय पद चाहते हो, बच्चों के लिए ऊँची नौकरियाँ चाहते हो और तुम्हारे घर में यह क्या पक रहा है? इसे घर में न रखो।'

उस पुस्तिका को जला दिया गया। सुभाष के घर आने पर उसे वह ज्ञात हुआ। वह फूट-फूटकर रोने लगा। दो दिन उसने कुछ भी नहीं खाया।

निश्चयी विद्यार्थी

जनवरी सन् 1909 में सुभाष चंद्र रेव्हनशा कॉलेजिएट स्कूल में भर्ती हुआ। अब तक के यूरोपियन स्कूल में बंगला का नाम तक नहीं था। रेव्हनशा में बंगला भाषा आवश्यक विषय था। छः माही परीक्षा में 'गाय' पर निबंध आया। सुभाष ने बीस पंक्तियाँ लिखीं। उनमें पचास गलतियाँ थीं। शिक्षक ने उस निबंध को कक्षा में पढ़ा। विद्यार्थी खूब हँसे। सब विषयों में सुभाष को अच्छा ज्ञान था। परन्तु बंगला में वह अनुत्तीर्ण रहा। उसने तुरन्त ही बंगला का अभ्यास करने का निश्चय

Scanned by CamScanner

किया। वार्षिक परीक्षा में बंगला में उसे सर्वाधिक अंक प्राप्त हुए। शिक्षक ने उसे बहुत शाबासी दी।

इस विद्यालय में वेणीमाधव नाम के ऋषितुल्य शिक्षक थे। उनका जब तबादला हुआ तब सुभाष बहुत रोया। पत्र द्वारा उसने उनसे संबंध रखा। वे भी अपने पत्रों से सुभाष को नई प्रेरणा देते रहते थे। एक बार उन्होंने लिखा— प्रकृति की शरण में जाओ। चेतनाघन प्रकृति के समान मनुष्य का न कोई मित्र है न मार्गदर्शक। सृष्टि के दृश्य केवल नयनाभिराम ही नहीं हैं। वे अन्तरात्मा में नये सामर्थ्य का संचार कराते हैं।

सुभाष चंद्र संध्या समय नदी के किनारे जा बैठता था। डूबते हुए सूर्य को वह टकटकी लगाकर देखता था। चारों ओर की शान्ति वह हृदय में भर लेता था।

अन्तरंग

सुभाष के भाई उच्च शिक्षा के लिए कलकत्ता रहने लगे। माँ उनके पास रहने लगी। सुभाष माता को पत्र लिखता था। उनमें इस प्रकार के विचार रहते थे। '...जो भी प्राप्त करें वह सब हम श्रीहरि के चरणों में समर्पित करें। मनुष्य और पशु में एक अन्तर है। पशु ईश्वर की न कल्पना कर सकते हैं, न प्रार्थना। मुझे श्रद्धा चाहिये। परमेश्वर के सर्वसामर्थ्य संपन्न स्वरूप पर मुझे श्रद्धा रखनी होगी। श्रद्धा से भक्ति प्राप्त होती है और भक्ति से ज्ञान...।'

पुष्पवाटिका में प्रतिदिन नये फूल खिलते हैं। उसी प्रकार मेरे मन में नित्य नई कल्पनाएँ उमड़ती हैं। इन मानसिक आविष्कारों को मैं तुम्हारे चरणों में चढ़ाता हूँ। ये सब तुम्हें सुगंधि के समान सुख देते हैं या काँटों के

Scanned by CamScanner

समान कष्ट? माँ, मेरी निकटतम आत्मीय हो इसलिए मैं तुम्हें बार-बार चिट्ठियाँ लिख अन्तरंग से अवगत कराता हूँ।

इस युग में परमेश्वर ने बाबू लोग नाम की अद्‌भुत वस्तु उत्पन्न की है। ईश्वर ने हमें भले-चंगे पैर दिये हैं परन्तु हम चालीस पचास मील चल नहीं सकते क्योंकि हम बाबू हैं। हमारे दो हाथ भी हैं। परन्तु उनका उपयोग करने में हमें लज्जा आती है क्योंकि हम बाबू हैं। ईश्वर ने हमें हृष्टपुष्ट शरीर दिया है परन्तु हम कष्टों से जी चुराते हैं। हम आलसी और अकर्मण्य बने हैं। जन्मे ऊष्ण प्रदेश में हैं। परन्तु हम गर्मी से घबराते हैं और जाड़े के दिनों में लबादा ओढ़कर हुः हुः हुः कहकर बैठे रहते हैं क्योंकि हम बाबू हैं।

हम मनुष्याकार पशु नहीं, पशु से भी गये गुजरे हैं। बुद्धि होते हुए हम उसका उपयोग नहीं करते। हम सुखासीन और विलासी बन, अपनी क्षमताएँ खो-बैठे हैं।'

सुभाष का पत्र आते ही सब भाई उस पर टूट पड़ते। फिर उसका सामूहिक वाचन होता था और खूब चर्चा छिड़ती थी। सतीश कहता 'पन्द्रह वर्ष की आयु में इसे खाने-पीने, खेलने में मग्न होना चाहिये।' शरद कहता—'गगन को छूने वाले विचार और सुडौल भाषा शैली, यह सब इसने कहाँ से पाया? सुरेश कहता—'कोई महात्मा इसे हिमालय न ले जाय', इन उद्‌गारों को सुन प्रभावती देवी का मन काँप उठता। कलकत्ता आने पर जानकी बाबू भी उन पत्रों को पढ़ते थे। वे कहते 'इतने प्रौढ़ और सुंदर विचार! कोई गत जन्म का सिद्ध महात्मा हमारे घर जन्मा है।'

Scanned by CamScanner

ध्यानधारणा

एक दिन सुभाष विवेकानंद ग्रंथावलि ले आया। वह उसका पठन मनन करने लगा। अपने पाठ्यपुस्तकों पर वह 'आत्मनो मोक्षार्थं जगत्हितायच' लिखने लगा। कटक के अनेक विवेकानंद प्रेमी उसने जुटाये। वे सब एकान्त स्थान में ध्यान, पठन, भजन करते। सुभाष घर के कोने में आँखें मूँदकर घण्टों बैठा रहता। कभी वह वन में चला जाता। सब सुभाष के भविष्य की चिन्ता करने लगे।

मार्च 1913 में उसने मैट्रिक की परीक्षा दी। सुभाष को किसी ने पढ़ते हुए नहीं देखा था। वह अपनी उत्तर पुस्तिका समय से बहुत पूर्व शिक्षक को थमा देता था। सब उसके बारे में निराश थे। परंतु सुभाष प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ। सम्पूर्ण प्रान्त में उसका दूसरा क्रमांक आया।

सेवाकार्य

सुभाष अब कलकत्ता के प्रेसिडेन्सी कॉलेज में जाने लगा। कलकत्ता में 'नवविवेकानंद समूह' का वह सदस्य बना। विवाह न करने की तथा दीनदुखियों की सेवा करने की उसने शपथ ली। आध्यात्मिक उन्नति और सामाजिक सेवा को प्रत्यक्ष में लाने हेतु वह प्रयोग करने लगा। उसके निवासस्थान के सामने एक वृद्ध भिखारिन बैठती थी। उसके बाल सफेद थे। चेहरे पर झुर्रियाँ थीं। वह चिथड़े पहनती थी। सुभाष ने सोचा, मुझे इसे कुछ देना चाहिये। परन्तु पिता जी के भेजे पैसे नहीं, स्वयं के कष्ट के पैसे। प्रेसिडेन्सी कॉलेज तीन मील दूर था। सुभाष वहाँ ट्राम से जाता आता था। उसने पैदल जाना शुरू किया और ट्राम के किराये के पैसे वह प्रतिदिन बूढ़ी भिखारिन को देने लगा। पिता जी को जब यह ज्ञात हुआ,

Scanned by CamScanner

तब उन्होंने अपना माथा ठोक लिया।

'समूह' के सदस्यों ने आठ दिनों का शिविर रखा। सब ने भगवा कपड़े पहने और झोली हाथ में लिए धन धान्य जुटाया। इस शिविर में मेडिकल कॉलेज के छात्र भी थे। उनमें से केशव बलिराम हेडगेवार के साथ सुभाष का विशेष स्नेह संबंध प्रस्थापित हुआ। सुभाष और केशव हेडगेवार ने अनेक बार कंधे से कंधा मिलाकर सेवा कार्य किया। बाढ़, हैजा, अकाल आदि आपत्ति से लड़ते-लड़ते देश की वास्तविक परिस्थिति का उन्हें दर्शन हुआ। सर्वत्र दारिद्र्य, दैन्य, अज्ञान, अकर्मण्यता, आलस्य तथा भीरुता का राज्य था। कौन इसे बदलेगा? यह प्रचण्ड कार्य कौन करेगा? ऐसे प्रश्न उनके हृदयों को कचोटने लगे।

सद्गुरु की खोज

सन् 1914 के मई मास में सुभाष चंद्र मित्र हरिपाद चट्टोपाध्याय के साथ गुरु की खोज में निकल पड़ा। न घर में बताया न पैसे लिये। वह ऋषिकेश से वाराणसी तक अनेक तीर्थ क्षेत्रों में गये। जटाजूट, भगवी कफनी, धूनी आदि देखकर वे माथा नमाते रहे। निराश हो, आगे बढ़ते रहे। 25 दिनों बाद सुभाष कलकत्ता आ पहुँचा। शरद दा उसे कटक ले आये। उसे देख प्रभावती देवी दौड़ पड़ी। गले लगाकर रोने लगीं। पास बैठाकर उन्होंने कहा– 'क्या अपनी माँ को केवल कष्ट देने के लिए ही तुम जन्मे हो?'

पिताजी की आँखों से अविरल अश्रुधारा बहने लगी। उनके पूछने पर सुभाष ने पूरा वर्णन सुनाया। पिताजी ने कहा– 'तुम वापस आ गये, हम सब कुछ पा गये।'

Scanned by CamScanner

इसके बाद सुभाष को टाइफाइड हुआ। कई दिनों तक वह बिस्तर पर रहा। जनवरी 1915 में उसने इंटरमीडिएट की परीक्षा दी। वह प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ।

'माफी नहीं माँगूँगा'

10 जनवरी 1916 की बात है। प्राध्यापक ओटन ने एक विद्यार्थी को भद्दी गालियाँ दीं और धक्का मारा। सुभाष उसे लेकर प्रिन्सिपल जेम्स के पास गया। विद्यार्थी ने पूरी आपबीती सुनाई। सुभाष ने प्रिन्सिपल से कहा— 'प्राध्यापक ओटन विद्यार्थियों से हमेशा ही बुरा व्यवहार करते हैं। विद्यार्थियों की सभा में उन्हें खेद प्रकट करना चाहिये।'

जेम्स ने कहा— 'ऐसा कभी नहीं होगा।'

विद्यार्थियों ने हड़ताल कर दी। एक दिन ओटन स्वयं विद्यार्थी सभा में उपस्थित हुए। उन्होंने कहा— 'जो हुआ सो भूल जाओ।' विद्यार्थियों ने तालियाँ पीटी। कॉलेज पूर्ववत् चलने लगा। परन्तु पन्द्रह दिनों बाद ओटन ने फिर से एक विद्यार्थी पर हाथ उठाया। विद्यार्थियों ने वहीं उन्हें घेरा और उनकी पिटाई की।

प्रिन्सिपल ने सुभाष को बुलाकर कहा— 'इस सब की जड़ में तुम हो, तुम माफी माँगो।'

सुभाष ने कहा—'मैं क्यों माफी माँगू? कसूर तो प्राध्यापक ओटन का है और उन्हें काबू में न रखने वाले आप हैं।

प्रिन्सिपल ने कड़क कर कहा—'मैं तुम्हें कॉलेज से निकाल देता हूँ।'

सुभाष ने कहा—'धन्यवाद!'

Scanned by CamScanner

स्वेच्छा सेवा संघ

सुभाष कटक में रहने लगा। उसने अपने मित्रों को जुटाया और 'स्वेच्छा सेवा संघ' स्थापित किया। कटक के आस-पास के गाँवों में जाकर इस संघ ने बहुत-सा सेवाकार्य किया। फिर सुभाष ने अपने साथियों से कहा—'हमारा कार्य केवल प्रासंगिक न रहे। हम उसे स्थायी रूप देंगे। हमारी शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक, तीनों प्रकार की उन्नति होनी चाहिये।'

वसतिगृह के मैदान में प्रति शाम को युवक जुटने लगे। वे नित्य नियम से व्यायाम, खेल, चर्चा, व्याख्यान आदि करने लगे। सुभाष अनेक विषयों पर अभ्यासपूर्ण भाषण देता था।

एक साल बीत गया। कलकत्ता की परिस्थिति बदल गई। सुभाष को स्काटिश मिशन कॉलेज में प्रवेश मिला। वहाँ उसने विश्वविद्यालय के चातुर्मासिक सैनिक शिक्षा शिविर में भाग लिया। बंदूक चलाना, घुड़सवारी, कवायत् आदि बातें उसने सीख लीं।

मार्च सन् 1919 में सुभाष ने बी.ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की एवं उसने दूसरा स्थान प्राप्त किया।

आई.सी.एस. का त्याग

सुभाष के पूर्व जीवन के ऐसे सारे प्रसंग जानकी बाबू तथा प्रभावती देवी की आँखों के सामने आने लगे। उनके मन में तरह-तरह की शंकाएँ उठीं... आये दिन अंग्रेज अधिकारी अधिकाधिक उन्मत्त हो रहे हैं। सुभाष का किसी उद्दण्ड अंग्रेज से पाला पड़ा तो? हे राम, मेरे सुभाष का क्या होगा? अंग्रेजों के साथ उसकी कैसे निभेगी?

Scanned by CamScanner

उन्हें शीघ्र ही पता चला कि सुभाष ने आई.सी.एस. से त्यागपत्र दे दिया। मित्र-रिश्तेदार सभी चकित हुए। आई.सी.एस. याने उच्च पद, मोटी तनख्वाह, ऐश्वर्य और रौब-रूतबा। भारत और इंग्लैंड में जिस आई.सी.एस. के प्रति हजारों युवक आकर्षित होते थे, उसे सुभाष ने जीवन से निकाल बाहर कर दिया।

अपने भाई शरद को उसने लिखा 'मैं भला अंग्रेजों की कभी सेवा कर सकता हूँ? असंभव। क्रूर-निर्दयी-अन्यायी अंग्रेजों का, जलियाँवाला बाग के रक्तपात के पापियों का, क्या मैं कभी साथ दे सकता हूँ? क्या मैं स्वदेश का शत्रु बन सकता हूँ—असंभव! यदि सब लोग अपने व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति में व्यस्त होंगे तो देश की चिंता कौन करेगा? माँ की पुकार रात दिन मेरे कानों में गूँज उठती है—'धाओ धाओ समरक्षेत्रे'-परतंत्र राष्ट्र का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह स्वातंत्र्य प्राप्ति तक अखण्ड लड़ता रहे। स्वतंत्रता संग्राम का सैनिक बनने हेतु मैंने आई.सी.एस. का त्याग किया है।'

विविध कार्यों में अग्रसर

भारत आकर सुभाष बाबू 16 जुलाई, 1921 को बम्बई में गांधी जी से मिले। फिर कलकत्ता पहुँचकर देशबंधु चित्तरंजन दास के चलाये राष्ट्रीय स्वयंसेवक दल के वे प्रमुख कार्यकर्ता बने। कुछ समय तक वे नेशनल कॉलेज के प्रिन्सिपल रहे। 'बांगलार कथा' और 'फारवर्ड' के वे संपादक बने। 'युगान्तर' और 'अनुशीलन' इन दो क्रान्तिकारी गुटों में समन्वय प्रस्थापित करने का उन्होंने भरसक प्रयास किया।

Scanned by CamScanner

इंग्लैंड का राजपुत्र भारत आया। कांग्रेस ने बहिष्कार किया। कलकत्ता में सर्वत्र उसे काले झण्डे दिखाये गये। अंग्रेजी सरकार ने प्रमुख नेताओं को जेल में ठूँसा। न्यायाधीश ने सुभाष को छह मास की सजा सुनाई। सुभाष ने उसे कहा– 'बस! छह मास! किसी की मुर्गी चुराने पर 6 मास की सजा दी जाती है। मैं तो अंग्रेजों का तख्त पलटने जा रहा हूँ।'

धुरंधर कार्यकर्त्ता

सन् 1924 में देशबन्धु दास कलकत्ता के महापौर बने। सुभाष महानगर पालिका के कार्यकारी अधिकारी बने। पालिका में अनेक अधिकारी अंग्रेज थे। उन्होंने सोचा, एक तो यह भारतीय, फिर अनुभवहीन छोकरा, इसे हम यूँ ही वश में कर लेंगे।

दूसरे ही दिन इंजीनियर कोट्स सिगरेट पीते हुए कार्यालय में आये। सुभाष चंद्र ने कड़ी आवाज में कहा–'क्या आप इसे शिष्टाचार मानते हैं? क्या आपके कनिष्ठ आपके साथ ऐसा ही व्यवहार करें?'

श्रीमान कोट्स ने उसी समय सिगरेट बुझाई और क्षमायाचना की। सुभाष का प्रभाव बढ़ा। अंग्रेज सरकार ने 25 अक्टूबर 1924 को उन्हें गिरफ्तार कर अलीपुर, बेहरामपुर आदि स्थानों पर रखने के बाद, माण्डले पहुँचाया। वहाँ की खराब हवा में वे बार-बार बीमार हुए। परन्तु पढ़ाई, चिंतन, मनन, ध्यानधारणा में वे मग्न रहते थे।

अपने मित्र दिलीप कुमार राय को उन्होंने लिखा–'प्रफुल्ल गुलाब के फूलों के लिए हमें काँटों का भी स्वागत करना होगा। ऊषा की शोभा यदि हमें देखनी है, तो हमें घनी अंधेरी रात धैर्यपूर्वक बितानी होगी।

Scanned by CamScanner

स्वतंत्रता का आनंद प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें उसकी पूरी कीमत चुकानी पड़ेगी।'

जेल में सुभाष ने उपोषण किया। समाचार पत्रों ने हो-हल्ला मचाया। प्रान्तीय विधानसभा के चुनाव हुए। जनता ने जेल में बन्द सुभाष को ही विजयी बनाया। उनका स्वास्थ्य जब अधिक बिगड़ा तब सरकार ने कुछ शर्तों पर छोड़ने का प्रस्ताव रखा। उन्होंने उसे ठुकरा दिया। भाई को उन्होंने लिखा—

'मेरा मन शान्त है। प्रभु की जो भी योजना होगी उसे स्वीकार करने के लिए मैं सिद्ध हूँ। मेरे प्रियतम स्वप्न भावी पीढ़ियों को विरासत के रूप में प्राप्त होंगे। यह श्रद्धा ही यातनामय मार्ग में मुझे प्रेरणा देती है।'

सुभाष बाबू का बुखार हटा नहीं। वे बेहोश होने लगे। सरकार ने सोचा इनकी मृत्यु समीप है। एक दिन चुपचाप सरकार ने उन्हें उनके घर पहुँचा दिया।

उनके भाइयों ने चार मास तक उन्हें शिलांग के आरोग्यधाम में रखा। कुछ ठीक होते ही वे विभिन्न कार्यों में जुट गये। वे बंगाल प्रान्त कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। 1 जनवरी 1928 को उन्हें अखिल भारतीय कांग्रेस का सहसचिव पद प्राप्त हुआ। वे देशभर में घूम कर जनजागरण करने लगे।

विदेशों में प्रचार

नमक सत्याग्रह प्रारंभ हुआ। 5 जनवरी 1938 को बम्बई जाते हुए सुभाष पकड़े गये। उन्हें सिवनी कारागार में रखा गया। वहाँ जब उनका स्वास्थ्य बिगड़ा तब उन्हें पहले जबलपुर में और फिर मद्रास में रखा गया।

Scanned by CamScanner

एक बार मद्रास के उच्च न्यायाधीश अब्बास अली कारागार निरीक्षणार्थ वहाँ आये। उन्होंने पूछा—'क्यों सुभाष बोस, मजे में तो हो?'

सुभाष ने तपाक से जवाब दिया, 'यहाँ आइये और मजा चखिये। केवल पूछने से क्या होगा?'

सुभाष का स्वास्थ्य बिगड़ता ही गया। सरकार ने उन्हें, 'देश निकाला' दिया। उनके भाई उन्हें उपचार हेतु विएना ले गये। जनता ने द्रव्य सहाय्य भेजा। 6 मार्च 1933 को वे यूरोप पहुँचे। स्वास्थ्य की परवाह न करते हुए वे यूरोप के अनेक देशों में घूमते रहे। रोमा रोलां, प्रा. लेस्नी, डॉक्टर बेनेस, डी. वैलेरा, मुसोलिनी, हिटलर आदि से मिलकर उन्होंने जागतिक परिस्थिति की चर्चा की। भारत के स्वातंत्र्य युद्ध में कौन-सा देश कितनी सहायता कर सकेगा, इसकी उन्होंने टोह ली। उन्होंने 'इण्डियन स्ट्रगल' नाम का ग्रंथ लिखा।

पिताजी के सख्त बीमार होने से, वे भारत लौटे। 4 दिसम्बर 1933 को वे कलकत्ता पहुँचे। एक दिन पूर्व ही पिताजी की मृत्यु हो गई थी। 11 जनवरी 1934 को उन्होंने फिर से यूरोप के लिए प्रस्थान किया। उनकी पेट की बीमारी का विएना में उपचार किया गया। 1936 में जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में लखनऊ में होने वाले कांग्रेस के अधिवेशन में भाग लेने हेतु वे निकल पड़े।

19 अगस्त 1936 को जहाज से उतरते ही पुलिस ने उन्हें पकड़ लिया और यरवदा जेल में भेज दिया। वहाँ उनका स्वास्थ्य गंभीर रूप से गिर गया। उनका गला सूज गया और दर्द करने लगा। तब सरकार ने उन्हें दार्जिलिंग जिले में गिड्डापहाड़ नामक स्थान पर शरदबाबू के बंगले में स्थानबद्ध किया।

Scanned by CamScanner

कांग्रेस की अध्यक्षता

बंगाल में फजलुल हक का मंत्रिमंडल बना। उसने 17 मार्च 1937 को सुभाष को मुक्त किया। देशभर में हर्ष की लहर दौड़ गई। उन्हें कांग्रेस का अध्यक्ष बनाया गया। फरवरी 1938 में तापी (गुजरात) में हरिपुरा अधिवेशन संपन्न हुआ। सुभाष ने शुद्ध हिन्दी में बहुत प्रेरणादायक भाषण दिया।

'इतिहास बताता है कि साम्राज्य निर्माण होते हैं, फैलते हैं और नष्ट होते हैं। अंग्रेजी साम्राज्य अब तीसरी स्थिति में है। उनके राज्य की समाप्ति; हमारी एकता, दृढ़ता, पराक्रम तथा त्याग पर निर्भर है। स्वराज्य प्राप्ति के लिए हमें क्रान्तिकारी कदम उठाने होंगे।'

उन्होंने देशभर में दौरा किया और स्वातंत्र्य प्रेम की ज्योति प्रज्वलित की। सुभाष के उग्र विचार, स्वतंत्र कर्तृत्व और प्रभाव के कारण बड़े-बड़े कांग्रेसी नेता उनसे ईर्ष्या करने लगे। गांधी जी, जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल, राजेन्द्र प्रसाद आदि उनके विरुद्ध हो गये। सुभाष बाबू अध्यक्ष पद के लिए फिर से खड़े हुए और पट्टाभि सीतारामय्या को हराकर कांग्रेस के अध्यक्ष बने। परन्तु वे बहुत बीमार हो गये। वे अध्यक्ष के उच्चासन पर भी नहीं बैठ सके। उनका भाषण उनके भाई ने पढ़कर सुनाया।

जमदोवा में इलाज कराते हुए उन्होंने एक पत्र में लिखा– 'त्रिपुरा का वायुमण्डल घिनौना था। उच्चस्तरीय अग्रगण्य नेता यदि इतने हीन, ईर्ष्यालु तथा कुटिल हैं, तब इनके हाथ में देश का भविष्य क्या होगा?'

Scanned by CamScanner

1 अगस्त 1939 को कलकत्ता में कांग्रेस प्रमुखों की सभा हुई। उस सभा ने सुभाष को कांग्रेस से निकाल दिया।

भीतर बाहर से युद्ध करेंगे

सुभाष ने शीघ्र ही 'फारवर्ड ब्लॉक' नाम का दल प्रारंभ किया। वे साप्ताहिक पत्रिका निकालने लगे। देशभर में भ्रमण कर अपने तेजस्वी विचारों से वे युवकों को आकर्षित करने लगे। 3 सितंबर 1939 को मद्रास में हुई उनकी सभा में ढाई लाख जनता उपस्थित थी।

सुभाष ने कहा—'अंग्रेजों पर संकट आना हमारे लिए स्वर्णावसर है। (Britain's Peril is India's Opportunity)। स्वातंत्र्य प्राप्ति के लिए हमें हर प्रकार से प्रयत्नशील रहना चाहिये।'

1940 की फरवरी में दिल्ली में अखिल भारतीय विद्यार्थी संगठन के विशाल अधिवेशन में उन्होंने कहा—'भूख, प्यास, उपवास, कष्ट, मृत्यु आदि का सामना करते हुए भी हमें अडिग रहना होगा। हम स्वराज्य लेकर ही दम लेंगे। इस हेतु भीतर बाहर से युद्ध करेंगे।'

इस भ्रमण में वे विभिन्न दलों के प्रमुख नेताओं से मिले। डॉक्टर अम्बेडकर, बैरिस्टर सावरकर आदि पुरुषों से वे मिले। डॉक्टर हेडगेवार उनके पुराने परिचित थे। उनका अनुशासनबद्ध संगठन-राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ सुभाष को ज्ञात था। डॉक्टर जी से मिलने हेतु वे नागपुर आये। परन्तु डॉक्टर जी उस समय मृत्युशय्या पर थे।

1 जुलाई 1940 को जनता को आह्वान करते हुए सुभाष बाबू ने कहा—'अंग्रेजों के पुतले गुलामी के प्रतीक हैं। उन्हें हम उखाड़ फेकेंगे। कलकत्ता के हालवेल स्मारक की हम ईंट से ईंट बजा देंगे।'

Scanned by CamScanner

शीघ्र ही उन्हें गिरफ्तार किया गया। अब तक वे दस बार जेल जा चुके थे। शासन की सैकड़ों अन्यायपूर्ण कृतियों के विरोध में उन्होंने उपवास प्रारंभ किया। उनका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। फजलुल हक की प्रार्थना पर अंग्रेज सरकार ने उन्हें कड़े पहरे में एम्बुलैंस में डालकर उनके घर पहुँचा दिया।

सीमापार

सुभाष बाबू ने परदेश जाने की योजना बनाई। उन्होंने दाढ़ी-मूछें बढ़ाईं। पठान जैसे कपड़े सिलवाये। छद्मनाम के भेंटपत्र भी छपवा लिए—'मोहम्मद जियाउद्दीन, प्रवासी प्रतिनिधि, जबलपुर।'

17 जनवरी 1941 की मध्यरात्रि में 38/2 एलगिन रोड पर एक मोटरकार आई और 'जियाउद्दीन' को ले गई। गाड़ी पहले धनबाद और वहाँ से गोमो स्टेशन पर पहुँची। वहाँ वे कालका मेल में सवार हुए। प्रथम दिल्ली, वहाँ से पेशावर और वहाँ से भगतराम तलवार के साथ वे काबुल की ओर चले। भगतराम 'रहमतखान' बन गये। अनेक संकटों का मुकाबला करते हुए दोनों भारत की सीमा के बाहर पहुँचे। सुभाष चंद्र ने मातृभूमि को प्रणाम किया और धूलि मस्तक पर लगाते हुए कहा—'वन्दे मातरम्'।

रास्ता अति कठिन था। सुभाष बाबू मस्ती के साथ कदम बढ़ा रहे थे। उनकी प्रसन्नता देख भगतराम चकित हुए। उनके मन में विचार आया—'पैदल, खच्चर पर या सामान ढोने वाले ट्रक पर बैठ ये रास्ता चल रहे हैं। कहीं भी बैठते-सोते हैं। जो भी रुखी-सूखी मिलती है, मजे से खाते हैं। कभी कोई शिकायत नहीं। कर्मयोगी महापुरुष हैं।'

Scanned by CamScanner

27 जनवरी 1941 की दोपहर वे काबुल पहुँचे। दूसरे ही दिन से रशियन, जर्मन, इतालियन राजदूतों से सम्पर्क प्रस्थापित करने के प्रयास में वे लग गये। यह सब गुप्त रीति से करना था। बार-बार अपयश पल्ले पड़ता था। दोनों में दिन में कई बार इस प्रकार संभाषण होता था।

'रहमतखान, अब क्या होगा?'

'बाबू जी, सब ठीक होगा।'

'कब?'

'आज नहीं तो कल।'

फिर दोनों खूब हँसते थे।

काबुल के दुकानदार उत्तम चंद मल्होत्रा ने दोनों की उत्तम व्यवस्था रखी। उन्होंने हर तरह का जोखिम उठाकर सुभाष को सहायता पहुँचाई।

तीनों ने खूब प्रयास किये। कभी निराशा के काले बादल छा जाते तो कभी आशा की किरणें दिखाई देतीं।

18 मार्च 1941 को ओर्लान्दो माझोता बनकर सुभाष बाबू काबुल से निकले। पाताकिसार, समरकंद तथा मास्को होते हुए वे बर्लिन पहुँचे।

आजाद हिन्द फौज

जर्मनी के बड़े-बड़े अधिकारियों ने सुभाष को हर तरह से तोला, परखा। जापान, इटली तथा जर्मनी के प्रमुखों ने आपस में विचार-विमर्श किया। सुभाष चंद्र को स्वतंत्र भारत के प्रवक्ता के रूप में तीनों ने मान्यता दी। बर्लिन में स्वतंत्र हिन्दुस्तान केन्द्र खुला।

Scanned by CamScanner

यूरोप के अनेक देशों में रहने वाले भारतीय नागरिक सुभाष चंद्र को तन–मन–धन से सहयोग देने लगे।

हजारों युद्ध बंदियों ने आजाद हिन्द सेना में प्रवेश किया। उनके प्रशिक्षण केन्द्र चलने लगे। 'जय हिन्द' का नारा बुलंद हुआ। 'जन गण मन' राष्ट्रगीत बना। भारतीय दूतावास पर व्याघ्र चित्रांकित तिरंगा झंडा लहराने लगा।

26 जनवरी 1942 को सैनिकों ने आजादी की शपथ ग्रहण की। अनेकों ने अपना अँगूठा चीरकर खून से हस्ताक्षर किये। सुभाष जी को तिलक लगाया। उस समय सुभाष ने कहा– 'आप लोग कल तक भारत के शत्रुओं का साथ दे रहे थे। आज आप भारत को स्वतंत्र करने हेतु सिद्ध हैं। यही सच्ची क्रान्ति है। यह बलिदान है। यह कभी विफल नहीं होगा। हम भारत को आजाद करके ही रहेंगे।'

रोम में भी आजाद हिन्द सेना की शाखा खुल गई। जापान में रासबिहारी बोस की प्रेरणा से उसी ढंग के प्रयत्न बड़े प्रमाण पर होने लगे।

27 फरवरी 1941 को सुभाष ने आजाद हिन्द रेडियो पर कहा– 'प्रिय भारतीयों, मैं सुभाष चंद्र बोस बोल रहा हूँ। गत एक वर्ष से मैं संगठन कार्य में जुटा रहा। अब हम सिद्ध हैं। हम बाहर से आक्रमण करेंगे। आप लोग भारत में विप्लव मचाइये।'

'सिंगापुर की पराजय का अर्थ है, अंग्रेजी साम्राज्य का अस्त और भारत के स्वराज्य का उदय।'

इस भाषण को सुनते ही भारत में नवचैतन्य की लहर दौड़ गई।

Scanned by CamScanner

अद्‌भुत यात्रा

द्वितीय विश्व युद्ध में जापान की विजय हो रही थी। 7 दिसम्बर 1941 को अंग्रेजों को पर्ल हारबर छोड़ना पड़ा। 12 दिसम्बर को अंग्रेजों के दो बड़े जहाज ध्वस्त हुए। 15 फरवरी 1942 को अंग्रेजों को सिंगापुर छोड़कर भागना पड़ा। रास बिहारी बोस तथा उनके सहयोगियों ने हजारों भारतीय सैनिकों को आजाद हिन्द सेना में शामिल कर लिया। उन्होंने बार-बार सुभाष चंद्र को निमंत्रण भेजा। सुभाष ने अपने यूरोपीय सहयोगियों से विचार-विनिमय करते हुए जापान जाना निश्चित किया।

यात्रा लम्बी थी। गुप्त रूप से करनी थी। न हवाई जहाज से जा सकते थे न समुद्री जहाज से न खुश्की मार्ग से। अत: पनडुब्बी से जाना निश्चित हुआ।

फरवरी 1943 में सुभाष बाबू पनडुब्बी में सवार हुए। वहाँ केवल 3 फुट लम्बी और 2 फुट चौड़ी जगह थी। खड़े तक नहीं रह सकते थे। चौबीसों घंटे इंजिन की घरघराहट चलती थी। डीजल तेल की गंध रातदिन नाक में घुसती थी। खाद्य पदार्थों में भी वही बू आती थी। ऊपर-नीचे चारों ओर पानी ही पानी। शत्रु की पनडुब्बियाँ, उनके लगाये विस्फोटक तथा जाल, भीमकाय जलचर पशु, यंत्र का बिगड़ना आदि अनेक खतरों से भरी वह यात्रा थी।

अट्ठासी दिनों के बाद 6 मई 1943 को यह वरुणी यात्रा साबांग बंदरगाह में समाप्त हुई। अब उन्होंने नया नाम धारण किया 'मातसुदा'।

पूर्व दिशा में क्रांति प्रकाश

जमीन पर पैर रखते ही सुभाष की दौड़ धूप प्रारंभ हो गई। टोकियो,

Scanned by CamScanner

रंगून और सिंगापुर से उनके भाषण आजाद हिन्द रेडियो ने प्रसारित किये।

4 जुलाई 1943 को सिंगापुर में 'इंडियन इंडिपेन्डॅन्स लीग' की सभा हुई। उसमें पूर्व एशिया के दो हजार प्रतिनिधि उपस्थित थे। सुभाष ने रास बिहारी के चरण छुए। रास बिहारी ने उन्हें गले लगाया।

रास बिहारी ने कहा— 'आज से इंडिपेन्डेन्स लीग का नया अध्याय प्रारंभ हो रहा है। लीग के सब सूत्र मैं सुभाष बाबू के हाथों सौंप रहा हूँ।'

रास बिहारी ने सुभाष को उच्चासन पर बैठाया। तालियों की गड़गड़ाहट से आकाश गूँज उठा। सुभाष ने सबको संबोधित किया—'शत्रु के शत्रु से मित्रता प्रस्थापित कर उसकी सहायता से अपने शत्रु को पछाड़ना सर्वमान्य राजनीतिक चाल है। तद्नुसार जर्मनी, जापान, इटली आदि देश हमारे मित्र बने हैं। मैं हिन्दुस्तान का सेवक हूँ, सैनिक हूँ। मैं जिऊँगा अपने देश के लिए और मरूँगा अपने देश के लिए।'

आजाद हिन्द सेना के सम्मुख उन्होंने कहा—'आप सब मुक्ति योद्धा हैं। आपका दर्शन मेरे लिए बहुत अभिमानास्पद है। अब हमारा नारा रहेगा – 'दिल्ली चलो'। लाल किले के मैदान में हम विजयगीत गाते हुए संचलन करेंगे। तब तक हम चलते रहेंगे, जूझते रहेंगे, बढ़ते रहेंगे।'

मैं तुम्हें केवल भूख, प्यास, कष्ट और मृत्यु दे सकता हूँ। भारत की स्वतंत्रता हमारा जीवन ध्येय है। उस हेतु सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए हम सिद्ध हैं।

तेरह हजार सैनिक गरज उठे, 'भारत वर्ष जिन्दाबाद'। 'आजाद हिन्द जिन्दाबाद।'

Scanned by CamScanner

युद्ध योजनाएँ बनीं

सुभाष बाबू ने जापानी सेनाधिकारियों तथा मंत्रियों को बहुत प्रभावित किया। जापान सब सहायता देने लगा।

9 जुलाई 1943 को सिंगापुर की जनता ने सुभाष बाबू का स्वागत किया। हजारों ने अपना नाम लिखवाया। हजारों ने धन समर्पण किया। सोने के अलंकारों के ढेर लग गये।

वे रंगून पहुँचे। एक लाख लोगों ने हवाई अड्डे पर उनका स्वागत किया। उन्हें अपार धन दिया। युद्ध कैदियों के अतिरिक्त अनेक नौजवान आजाद हिन्द सेना में भर्ती हुए। महिलाओं के लिए 'रानी लक्ष्मीबाई रेजिमेन्ट' खोलनी पड़ी। युद्धविद्या के प्रशिक्षण केन्द्र चलने लगे।

एक छावनी में पचास हजार सैनिकों ने गणवेषधारी सुभाष को मानवंदना दी। सुभाष ने सबसे प्रतिज्ञा पढ़वाई— 'मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि भारतवर्ष के स्वातंत्र्य युद्ध में मैं आखरी दम तक लड़ूँगा। अपने अड़तीस करोड़ भाई-बहनों की हित-साधना ही मेरा परम कर्तव्य है।'

प्रत्यक्ष युद्ध की योजनाएँ बनीं। भारत में किस रास्ते से प्रवेश करना होगा, किस दिन, किस नगर में स्वराज्य का झंडा लहरायेगा, इसकी पूरी समयसारिणी बनाई गई, नगाड़े बजने लगे। सेनाएँ इम्फाल की ओर कूच करने लगीं। अंडमान-निकोबार जीत कर वहाँ तिरंगा लहराने लगा, बरसों से संजोये हुए स्वप्नों को प्रत्यक्ष में उतारने का समय निकट आ गया।

परन्तु हाय! इसी समय दैव ने पासा पलटा।

संकटों का पहाड़

मुसोलिनी की मृत्यु हुई। हिटलर का जादू समाप्त हुआ।

Scanned by CamScanner

इंग्लैंड–अमेरिका तथा रूस की जीत होने लगी।

ब्रह्मदेश (अब म्याँमार) में धुआँधार वर्षा होने लगी। नदी–नालों में बाढ़ आ गई। रास्ते रुक गये। आगे बढ़ना तो क्या पीछे हटना भी कठिन हो गया। दो–दो दिन फाँके पड़ने लगे। सैनिक बीमार पड़ने लगे।

23 जनवरी 1945 को सुभाष का 48वाँ जन्मदिन आया। सुभाष की सुवर्णतुला की गई। वह धन आजाद हिन्द सेना को दिया गया। सुभाष का भाषण सुनकर श्रोता भावविभोर हो गये। हमीद खान नाम का पंजाबी मुसलमान दौड़ते हुए उनके पास आया। उसने कहा—'मेरी लाखों की जायदाद आपके चरणों में समर्पित है।' इस प्रकार के सैंकड़ों हमीद खान जुटने लगे। परन्तु मुसीबतों के बड़े–बड़े पहाड़ भी उसी समय टूटने लगे।

रूस ने जापान पर आक्रमण किया। जापानी सेनाधिकारियों के आपसी मतभेद खड़े हुए। 24 अप्रैल 1945 को सुभाष ने रंगून छोड़ा। वे अन्य छावनियों में गये। ऊपर से बम बरस रहे थे। चारों ओर तोपें गरज रही थीं। हथगोले फेंके जा रहे थे। रास्ते पानी और कीचड़ से भरे थे। पेट में अन्न नहीं था। घण्टों तक पैदल चल रहे थे। भीगे कपड़ों में ही सोना पड़ता था। पैरों में छाले पड़ गये थे। फिर भी सब की चिन्ता करते हुए दूसरों को उत्साह देते हुए, हृदय में ध्येय की आग लिये नेताजी सुभाष चंद्र बोस आगे बढ़ रहे थे।

भयानक ज्वालाएँ

जापान पर एटम बम बरसे। जापान ने हथियार डाल दिये। कोई सहारा नहीं बचा। संकट बढ़ने लगे। सहयोगियों ने कहा— "नेता जी,

Scanned by CamScanner

आप कहीं गुप्त स्थान पर चले जाइये तो किसी प्रकार संघर्ष चलाया जा सकेगा।" नेताजी का मन नहीं कर रहा था। परन्तु सहयोगियों ने उन्हें मंचूरिया भेजने का निश्चय किया।

हबीबुर्रहमान को साथ लिये सुभाष छोटे से जापानी हवाई जहाज में बैठे। साय गाँव, तुरेन होते हुए वे तैपेई तक पहुँचे। उसके बाद वह कहाँ गए – यह रहस्यमय है।

परन्तु यह सत्य है कि भारत वर्ष के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में उनका महान योगदान हमेशा स्वर्णाक्षरों में लिखा जायेगा। भारत माता का यह महान सपूत सदा के लिए अमरत्व को प्राप्त कर गया।

Scanned by CamScanner